स्कूल और ख़ुशहाली | संवाद की संस्कृति का निर्माण

अरुणा ज्योति और शोभा एल.कवूरी

विद्यार्थी अपना अच्छा-ख़ासा समय स्कूल में बिताते हैं और उनके स्कूली अनुभव का उनके जीवन पर प्रभाव पड़ता है। ऊपरी तौर पर देखें तो स्कूल ख़ुशहाली के बोध को प्रभावित करने और सामाजिक-भावनात्मक शिक्षा को प्रोत्साहित करने की अनोखी स्थिति में होते हैं। यहीं पर संस्थानों के रूप में स्कूलों की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वे ऐसी संस्कृति का निर्माण करें जो बच्चों को पोषित करें और बहुत छोटी उम्र से ही उनकी ख़ुशहाली को सुनिश्चित करें। जैसा कि शाइन (Schein)[i] ने कहा है कि संस्कृति एक ऐसी चीज़ होती है जो एक लम्बे समय में स्थापित होती है और जहाँ लोग सम्बन्ध बनाना सीखते हैं, एक-दूसरे का विश्वास जीतते हैं, समस्याओं को हल करना सीखते हैं और टकरावों का समाधान करते हैं। इसलिए, स्कूलों को हम ऐसी जगह के रूप में देख सकते हैं जहाँ स्कूल के सभी हितधारक एक साथ काम करते हुए इस संस्कृति को स्थापित करते हैं। और यह एक ऐसी ज़रूरत बन गई है जिसे महामारी के दौरान ख़ासतौर पर महसूस किया गया।

सामान्य शब्दों में, ख़ुशहाली को हम इस रूप में देख सकते हैं - अच्छा महसूस करना और अच्छी तरह काम करने का योग, सकारात्मक भावनाओं और सम्बन्धों का अनुभव करना, एक उद्देश्य बोध के साथ अपनी सम्भावनाओं को विकसित करना। यह 'दिल' और 'दिमाग़' को साथ लाने जैसा है। हम जिस तरह सोचते हैं वैसा ही महसूस करते हैं और दिमाग़ किसी भी परिस्थिति की जिस तरीक़े से कल्पना करता है उसी तरह हम उसका एहसास करते हैं। फ्रांसीसी दार्शनिक और गणितज्ञ रेने देकार्त (Rene Descartes, 1596-1650) के लातिनी मुहावरे cogito, ergo sum का अनुवाद है "मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ।" देकार्त का अधिकांश दार्शनिक चिन्तन मस्तिष्क और शरीर के बीच सम्बन्धों के बारे में है। तो क्या ख़ुशहाली तब केवल दिमाग़ का ही मामला है? क्या इसकी पड़ताल तार्किक रूप से की जानी चाहिए या समानुभूति के साथ? क्या तार्किकता और भावनात्मकता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं या दोनों एक-दूसरे से अलग अपना काम करते हैं? हालाँकि जो हम सोचते हैं और कल्पना करते हैं, अगर उसका हमारे भौतिक शरीर, भावनाओं और व्यवहार पर एक असर होता है, तब ख़ुशहाली को हमारे शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक रूपों के एक साथ आने के तौर पर देखा जा सकता है।

इस लेख में साझा किए गए अनुभव कुछ ख़ास सवालों के बारे में मौलिक सोच-विचार को प्रेरित करने के लिए हैं। उदाहरण के लिए, क्या यह दिखाया जा सकता है कि परिवार के सहयोग (अच्छी जीवन परिस्थितियों, घर और पोषण युक्त खाने के लिए) के साथ, स्कूल का सहयोग बच्चों में 'अच्छा महसूस करने' की ज़रूरी व बुनियादी चीज़ें तैयार करता है? या ख़ुशहाली का बोध क्या प्रगट रूप में इन बातों में झलकता है कि किसी के साथ उसके नज़दीक के लोग, उसके दोस्त कैसा व्यवहार करते हैं और स्कूल में उसके साथ कैसा व्यवहार होता है?

यह लेख उस संस्कृति के निर्माण के अनुभव पर केन्द्रित है जिसे अज़ीम प्रेमजी स्कूलों की स्थापना के दौरान ख़ुशहाली को प्रोत्साहित करने के लिए अपनाया गया था। चूँकि फ़ाउण्डेशन के स्कूल शारीरिक दण्ड को मान्य नहीं करते, अनुशासन के लिए बाहरी तत्वों पर निर्भर नहीं करते, रटने को और स्कूली जीवन से जुड़े इसी तरह के दूसरे कारकों को प्रोत्साहित नहीं करते, इसलिए देकार्त का कथन (जो दिमाग़ और शरीर के बीच जटिल रिश्तों पर विचार करता है) इस आख्यान के लिए हमें एक उचित शुरुआती बिन्दु उपलब्ध कराता है।

स्कूल संस्कृति

'संस्कृति स्कूलों में बहुत गहराई से गुँथी होती है और इसलिए स्कूल के परिवेश में व्यवस्थित परिवर्तन के ज़रिए एक लम्बे समय में ही इसे बदला जा सकता है।'[ii]... 'स्कूल संस्कृति को किसी स्कूल में लोगों में या उनके बीच के साझे मूल्यों, नियमों, विश्वासों, शिक्षण व सीखने के तरीक़ों, आचरणों और रिश्तों के रूप में परिभाषित किया जाता है।'[iii] यह अक्सर सतह के नीचे काम करती है और स्कूल के नियमों, अलिखित कानूनों, परम्पराओं और उनमें निहित उम्मीदों को समाहित किए होती है।

अज़ीम प्रेमजी स्कूलों की स्थापना में जिन बहुत-सी चीज़ों की ज़रूरत थी उनमें ऐसी जगह का निर्माण करना प्राथमिकता थी जहाँ बच्चे सुरक्षित और ख़ुश महसूस करें। यह सोचा गया कि एक ख़ुशनुमा परिवेश, शिक्षण व सीखने के समृद्ध अनुभवों,

शिक्षक के उत्तरदायित्व, जीवन्त अभिभावक-शिक्षक विचार-विमर्शों और सभी के बीच स्वस्थ सम्बन्धों के लिए आधार का काम करेगा। ऐसा इसलिए है कि अपेक्षाएँ लगभग सभी चीज़ों को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए, ख़ुश होने का मतलब यह है कि स्कूल आने के प्रति इच्छुक होना। इस बात ने हमारे समग्र उद्देश्य व इरादे को मदद दी तथा स्कूल के सभी हितधारकों (शिक्षक, विद्यार्थी और अभिभावक समान रूप से) के बीच स्कूल से जुड़ाव व स्वामित्व की भावना को प्रेरित करने को आवश्यक बना दिया।

स्कूल की संस्कृति को एक जीवन्त, विकासमान प्रक्रिया के रूप में देखा गया जो किसी एक व्यक्ति या लिखित विधानों के ऊपर निर्भर होने की बजाय ज़रूरतों और परिस्थितियों पर ज़्यादा निर्भर होती है। यह भी माना गया कि पाठ्यक्रम की प्रत्येक प्रक्रिया और घटना निस्सन्देह ही विश्वासों और मूल्यों की आधारशिला के रूप में काम करेगी जिसका उपयोग उसके बाद ऐसे स्कूल परिवेश के लिए नज़रिए बनाने में किया जाएगा जो बच्चों के कार्यों और आचरण का मार्गदर्शन करेगा।

जैसा कि केंट पीटरसन और टेरेंस डील (Kent Peterson and Terrence Deal) कहते हैं "स्कूलों में रोज़ाना के जीवन की सतह के नीचे वे भावनाओं, रहन-सहन के तौर-तरीक़ों, मानदण्डों व मूल्यों की एक भूमिगत धारा बहती है जो इस बात को प्रभावित करती है कि लोग अपना रोज़ का काम कैसे करते हैं। ये अपेक्षाएँ, जिन्हें लोग यूँ ही स्वीकार कर लेते हैं, इस बात को प्रभावित करती हैं कि लोग कैसे सोचते हैं, कैसा महसूस करते हैं और कैसा काम करते हैं।"[iv] चूँकि स्कूल अभी शुरू ही हुए थे इसलिए इनमें से कोई भी पहलू तय नहीं था। एक सहयोगात्मक, सक्षम बनाने वाला वातावरण विकसित करने और अपने स्कूल के लिए एक 'अनुभूति' विकसित करने के लिए सभी को सामूहिक तरीक़े से काम करने की ज़रूरत थी।

एक स्कूल संस्कृति का निर्माण

'स्कूलों को ऐसी जगह के रूप में देखा जाता है जहाँ शिक्षण और शिक्षार्जन होता है, जहाँ ज्ञान दिया जाता है, जहाँ बच्चे अन्य लोगों, इतिहास और विभिन्न सामाजिक मुद्दों के बारे में सीख सकते हैं।'[v] शिक्षा को सामाजिक संवेदनशीलता के साथ-साथ आत्म जागरूकता को भी प्रोत्साहित करना चाहिए। इसलिए स्कूल सिर्फ़ एक भौतिक जगह से कहीं ज़्यादा होते हैं। ऐसे *स्कूल समुदाय* का निर्माण जो समानता, सामाजिक न्याय व सभी के प्रति सम्मान के आदर्शों वाले वातावरण में सीखता और सहयोग करता हो, अज़ीम प्रेमजी स्कूलों का अहम उद्देश्य रहा है। इसलिए, यह विश्वास किया गया कि संवाद व सहयोग की प्रक्रिया के ज़रिए स्कूल के प्रबन्धन में सभी हितधारकों को भागीदार होना चाहिए जिससे एक समुदाय और स्वामित्व का बोध प्रोत्साहित हो सके।

संवाद की भूमिका

संवाद आत्मपरीक्षण और साझेदारी की एक प्रक्रिया है जो अलग-अलग दृष्टिकोणों को साथ-साथ बने रहने का अवसर देती है। स्कूल के सभी हितधारकों के बीच संवाद, सम्बन्ध निर्माण, सभी स्तरों पर (समूह के भीतर या व्यक्तियों के बीच) टकराव का समाधान और चीज़ों को हल करने के लिए एक मंच का होना - इन्हें एक समर्थकारी संस्कृति व शिक्षा के रास्ते की स्थापना में निर्णायक तत्व के रूप में देखा गया, यानी लोगों को इस रूप में दक्ष बनाने और शिक्षित करने के माध्यम के रूप में कि वे संवाद को महत्त्व दे सकें और संवाद में शामिल हो सकें। सुबह की सभा, मीटिंग, कक्षा और खेल के मैदान जैसे स्थानों को संवाद और विचारों को साझा करने के लिए इस्तेमाल किया गया। उदाहरण के लिए, सभा का मतलब सिर्फ़ प्रार्थना करना, समाचारों को साझा करना व स्कूल से सम्बन्धित नियमित रिवाज़ ही नहीं था। सुबह की सभा को परस्पर संवाद को आगे बढ़ाने वाले एक मंच के रूप में ज़्यादा देखा जाता था। वयस्कों और बच्चों, दोनों को उनकी रूचि के विषयों पर अपनी राय साझा करने और बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। बच्चों के प्रदर्शन कक्षा में जो भी सीखा है उसका परिणाम होते थे न कि सुबह की सभा के लिए ख़ासतौर पर योजनाबद्ध तरह से तैयार चीज़ों का। ये सब वे तरीक़े थे जिनसे बच्चों को यह एहसास होता था कि उनकी राय को सुना जा रहा है और वे भी अपना योगदान कर सकते हैं। खेल के मैदान में जीतना और हारना खेल का हिस्सा माना जाता था और चर्चा सिर्फ़ खेल के इर्द-गिर्द नहीं होती थी बल्कि इस पर भी होती थी कि बच्चों ने क्या महसूस किया और उनका व्यवहार कैसा था (विशेषतौर पर ऐसे मामलों में जहाँ खेल के दौरान किसी तरह की आक्रामकता देखी गई हो)।

समय के साथ, बच्चों ने चर्चा के दौरान, शिक्षकों या कम परिचित लोगों के साथ संवाद करते हुए और अपने मुद्दों को साझा करते हुए बोलने का आत्मविश्वास विकसित कर लिया। यह इस बात को सुनिश्चित करने का भी एक तरीक़ा था कि बच्चे सोचे-समझे चुनाव करने के क़ाबिल हों। एक स्कूल में शिक्षकों का यह मानना था कि सामाजिक मुद्दों पर विद्यार्थियों की जागरूकता बनाना बहुत महत्त्वपूर्ण था। इसलिए, उन्होंने सभा और कक्षा के दौरान विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करना शुरू किया जिसमें उस क्षेत्र में बाल विवाह की सतत समस्या भी शामिल थी। इसका परिणाम यह हुआ कि एक विद्यार्थी शादी के सामाजिक दबाव का प्रतिरोध करने में समर्थ हो सकी।

इससे यह पता चलता है कि सभी की ख़ुशहाली (व्यक्तिगत और सामूहिक, दोनों रूप से) को सुनिश्चित करने के लिए संवाद एक प्रभावी तरीक़ा होता है।

स्कूल के हितधारकों के साथ काम करना

अभिभावकों के साथ जुड़ाव

स्कूल जिस तरह के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे उसे देखते हुए, अभिभावक शिक्षक मीटिंगों (PTMs) को विचारपूर्ण तरीक़े से योजनाबद्ध करना होता था। शिक्षकों को स्कूल के नज़रियों को सामने रखने के साथ ही अभिभावकों और समुदायों के नज़रियों को समझने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता था। यह सुनिश्चित करने के लिए कि अभिभावक पीटीएम में आने के लिए सकारात्मक रुख अपनाएँ, इसे शिकायत का एक मंच बनाने पर फ़ोकस नहीं था। इसकी बजाय, यह एक ऐसी जगह थी जहाँ विचारों का आदान-प्रदान होता था, बच्चों की सफलता की ख़ुशी मनाई जाती थी और यह सुनिश्चित किया जाता था कि शिक्षक व अभिभावक साथ मिलकर बच्चों की ख़ुशहाली और प्रदर्शन के लिए काम करें।

शिक्षकों से इस बात की उम्मीद भी की जाती थी कि वे प्रत्येक बच्चे के काम का रिकॉर्ड रखें और उसे अभिभावक को उपलब्ध कराएँ। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि अभिभावकों को अपने बच्चे के बारे में जानने का अधिकार है और शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह सभी तथ्य सबूतों के साथ उपलब्ध कराए। अभिभावकों से यह उम्मीद की जाती थी कि वे अपने बच्चे के सीखने की प्रक्रिया के साथ जुड़ें, उसमें रुचि लें, बच्चे की पढ़ाई के लिए एक दिनचर्या बनाएँ लेकिन कोई ज़रूरी नहीं है कि उसे पढ़ाएँ। इस तरह, सम्मान व विश्वास परस्पर रूप से था।

अभिभावकों की चिन्ताओं पर दोस्ताना तरीक़े से ध्यान दिया जाता था। यदि शिक्षक महसूस करते थे कि कुछ चिन्ताएँ ऐसी हैं जिनसे निपटना उनकी क्षमता के बाहर है तो वे इन्हें अपने सहयोगियों और प्रबन्धन के साथ साझा कर सकते थे। परिप्रेक्ष्य निर्माण, मीटिंग के एजेंडा का हिस्सा होता था, जहाँ इस तरह के मसलों पर चर्चा की जाती कि रटने को क्यों रोका जाता है, स्कूल का दृष्टिकोण और शिक्षा के अन्य वृहत्तर व व्यापक उद्देश्य। एक स्कूल में शुरुआती एक पीटीएम में आने वाले एक अभिभावक ने कहा था, “मैडम आप वह कीजिए जिसके लिए आप यहाँ आई हैं, हमारा पूरा समर्थन आपके साथ है।”

बच्चों के साथ काम

स्कूल में नामांकित होने वाले बच्चे स्थानीय समुदायों से आते थे। वे उन नियमित तरीक़ों के अभ्यस्त थे जिनसे स्थानीय स्कूल चलते थे, जहाँ पदानुक्रम, भौतिक प्रोत्साहन, सज़ा और परीक्षा जैसी बातें सामान्य होती हैं। उदाहरण के लिए, बच्चे इस बात के अभ्यस्त थे कि वे लगातार शिक्षक की निगरानी में रहें और ग़लती करने पर उन्हें डाँटा जाए। वे यह नहीं समझ पाते थे कि उस समय कैसे व्यवहार किया जाए जब उन्हें ‘मुक्त होकर खेलने’ का या कक्षा में स्वतः सीखने (जैसे स्वतंत्र तरीक़े से पढ़ना या दिलकश चित्रात्मक किताबों का चयन करना) का मौक़ा दिया जाता था। चूँकि उनके नए स्कूल में दण्ड नहीं दिया जाता था, तो बच्चे प्रायः उस वक़्त ‘उत्तेजित’ और आक्रामक हो जाते थे जब उन्हें उनके भरोसे छोड़ दिया जाता था। यहाँ बच्चों के साथ लगातार संवाद से काफ़ी मदद मिली।

शिक्षक विवाद के दोनों तरफ़ के तर्कों को सुनते हुए, बच्चों के साथ संवाद में शामिल होते थे। एक शिक्षक के लिए सक्रिय श्रोता, अवलोकनकर्ता, हस्तक्षेप न करने वाला, निष्पक्ष और धारणा न बनाने वाला होना ज़रूरी था। निस्सन्देह यह शिक्षकों के लिए चुनौतीपूर्ण था और उनके सोच-विचार के सामान्य ढंग के उलट था। इसलिए, बच्चों के साथ काम करने के नियमित तरीक़ों का परीक्षण करने की एक ज़रूरत थी। धीरे-धीरे शिक्षकों ने बच्चों को समाधान देने की बजाय उन्हें ख़ुद अपनी समस्याएँ हल करने के लिए उत्साहित करना शुरू किया। शिक्षकों ने बच्चों को दोस्तों के साथ जुड़ने के वैकल्पिक रास्ते दिखाए और खेल के मैदान में हारने पर दुखी होने या क्रोधित होने की स्थिति को कैसे सम्भाला जाए और स्कूल के काम, किसी सहपाठी या कभी-कभी घर की परिस्थितियों के साथ निराशा महसूस करने की स्थितियों से कैसे निपटा जाए, इसके बारे में भी उनसे चर्चा की।

ये परिवर्तन सुखद रूप से आश्चर्यजनक थे। एक महीने के अन्दर बच्चे इस परिवेश में ढलने लगे। वे अपने बोर्ड गेम ख़ुद बनाने लगे, आसानी से उपलब्ध चीज़ों के साथ खेलने लगे और जब उन्हें ख़ाली समय/ निगरानी रहित समय (शिक्षकों की तरफ़ से किसी भी औपचारिक निर्देश या संगठित गतिविधियों से रहित समय) में उन्हें उनके भरोसे छोड़ दिया जाता था तो उन्होंने धीरे-धीरे उपयोगी और उत्पादक होने के तरीक़े खोज लिए।

शिक्षकों के साथ सोच-विचार

हालाँकि, शिक्षक इस संस्था के लिए तो नए थे लेकिन वे इस पेशे के लिए नए नहीं थे। वे अपने विश्वासों और मूल्यों के साथ यहाँ आए थे चाहे वह शिक्षा के बारे में हों, बच्चों के बारे में, ख़ुद शिक्षकों के रूप में उनके अपने बारे में, अनुशासन के विचार के बारे में या परीक्षा जैसे पहलुओं के बारे में। विद्यार्थियों की ख़ुशहाली के किसी भी प्रयास के लिए शिक्षकों की ख़ुशहाली और मूल्य बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। इस बात की ज़रूरत थी कि शिक्षक अपने महत्त्व को महसूस करें, उनकी

अपनी आवाज़ हो और उनके काम को प्रभावित करने वाली निर्णय प्रक्रिया में वे शामिल हों। शिक्षकों को उनके अनुभव और विशेषज्ञता के लिए सम्मान दिया जाता था और सराहा जाता था। वहीं शिक्षकों को इस बात को समझना था कि शिष्यों के साथ उनके अच्छे रिश्ते का कितना महत्त्व होता है और उन्हें जानने के लिए उन्हें समय देने की ज़रूरत होती है। उन्हें इस बात को समझना था कि विश्वास और भरोसे की संस्कृति बनाने में उनकी भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण थी।

प्रक्रियाओं और व्यवस्थाओं को इस तरह रखा गया था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अपने स्कूल के लिए स्वामित्व बोध विकसित करने हेतु शिक्षकों के साथ गुणवत्तापूर्ण समय बिताना ज़रूरी था। संवाद और बातचीत को एक-दूसरे को समझने और मतभेदों को दूर करने के लिए 'आगे बढ़ने का रास्ता' माना गया। स्टाफ़ के साथ मीटिंग, एक ऐसा ही मंच था, जो स्कूलों को शुरू करने के दिनों में लगभग रोज़ की जाती थीं। यह सबके लिए एक साथ इकट्ठा होने, उस दिन के काम की विशेष बातों, चिन्ताओं को एक-दूसरे के साथ बाँटने, उपलब्धियों की ख़ुशी मनाने और प्रशासन, मिड-डे मील (एमडीएम) या कक्षा से जुड़ी चुनौतियों पर विमर्श करने का वक़्त होता था।

ये मीटिंगें एक ऐसा मंच भी होती थीं जहाँ नज़रियों का निर्माण किया जा सकता था, कक्षा शिक्षण व स्कूल की प्रक्रियाओं से जुड़े व्यवहारों पर चर्चा की जा सकती थी और टकरावों का समाधान किया जा सकता था। यह वह जगह बन गई जिसका इस्तेमाल यह समझने के लिए किया जाता था कि शिक्षण के लिए पाठ्यपुस्तकों से परे जाने का क्या मतलब था, क्यों बच्चों के सीखने की रफ़्तार एक समान होने की ज़रूरत नहीं होती, समरूपता होना ज़रूरी है क्या और यह समझना कि कक्षा प्रबन्धन का मतलब अपनी ख़ुद की भावनाओं और व्यवहार का प्रबन्धन करना होता है आदि।

बड़े पहलू जैसे शिक्षा व पाठ्यचर्या के उद्देश्य या व्यवहार का संगठन की दृष्टि के साथ मेल रखना, शिक्षकों के औपचारिक पेशेवर विकास सत्रों के दौरान उठाए जाते थे, हालाँकि सिर्फ़ इसी तक ही सीमित नहीं थे। स्टाफ़ मीटिंगों के लिए एजेंडा बहुत कड़ा नहीं होता था, यहाँ लोग अपनी बातों को कह सकते थे। मूलतः, स्टाफ़ मीटिंग वह जगह थी जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को एक नई स्कूल संस्कृति को लाने के लिए शिक्षकों के रूप में अपनी ख़ुद की अपेक्षाओं का परीक्षण करना होता था। इसके पीछे विचार यह था कि सभी मामलों पर एक साझा समझ बन सके।

शिक्षक का पेशेवर विकास

पेशेवर विकास कार्यक्रमों को फ़ाउण्डेशन के दृष्टिकोण और शिक्षकों की ज़रूरतों के आधार पर तैयार किया गया था। शिक्षक के पेशेवर विकास की योजना इस विश्वास के साथ बनाई जाती थी कि यह एक ऐसी प्रक्रिया होगी जो लगातार और सतत जुड़ाव की माँग करेगी। प्रत्येक वर्ष अलग-अलग स्कूल में एक वार्षिक कार्यक्रम होता था जहाँ सभी स्कूलों के शिक्षक इकट्ठा होते थे। इससे शिक्षकों को दूसरी जगहों के स्कूलों तक जाने का अवसर मिलता था और यह देखने का अवसर मिलता था कि फ़ाउण्डेशन के अन्य स्कूल कैसे काम करते हैं। वहाँ शिक्षक इकट्ठा होते, अपने विचारों और व्यवहारों को साझा करते, एक-दूसरे से सहयोग करते और एक-दूसरे से सीखते थे। इसके पीछे केन्द्रीय विचार यह था कि फ़ाउण्डेशन के स्कूलों के अध्यापकों के बीच मैत्री और बन्धुता के व्यवहार को प्रोत्साहित किया जाए।

स्कूल कमेटियाँ

प्रवेश, एमडीएम, पुस्तकालय, सावधानी और सुरक्षा, गतिविधियाँ और उत्सव तथा सभा जैसी विभिन्न कमेटियाँ गठित की गईं। शिक्षकों को बारी-बारी से इन कमेटियों में इस तरह से नियुक्त किया गया ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि प्रत्येक शिक्षक सभी स्कूली प्रक्रियाओं में शामिल हो सकें, स्कूल का सकारात्मक अनुभव प्राप्त कर सकें और साथ मिलकर संस्था की संस्कृति का निर्माण कर सकें।

विद्यार्थियों को भी कुछ कमेटियों का हिस्सा बनाया गया। उदाहरण के लिए, पुस्तकालय कमेटी के सदस्यों के रूप में वे किताबों के रखरखाव, उनको लेने और देने की प्रक्रिया में मदद करते थे। इसी तरह एमडीएम कमेटी के सदस्यों के तौर पर वे खाना परोसने, साफ़-सफ़ाई करने और यह सुनिश्चित करने में मदद करते थे कि भोजन बर्बाद न हो। स्कूली प्रक्रियाओं में भागीदारी से विद्यार्थियों को यह समझने का अवसर मिला कि उनका स्कूल कैसे चलता है और इससे उन्हें ज़िम्मेदारियों को स्वीकार करने का प्रोत्साहन मिला। साथ ही, उन्हें ज़िम्मेदार व्यवहार करने के बारे में उनसे जुड़ी अपेक्षाओं को जानने का और यह समझने का अवसर मिला कि स्वस्थ रिश्ते बनाने में वे किस तरह मदद कर सकते हैं।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवरण फ़ाउण्डेशन के स्कूलों के शुरुआती वर्षों के अनुभवों को बताते हैं। जैसा कि ज़्यादातर संस्थाओं के शुरुआती चरणों में होता है, यहाँ भी स्कूलों की स्थापना के वक़्त संसाधनों और सुविधाओं, (ज़्यादातर स्कूल उस वक़्त किराए की जगहों पर चलते थे) प्रक्रियाओं की स्थापना तथा विभिन्न पृष्ठभूमियों से आने वाले शिक्षकों के साथ काम करने के सन्दर्भ में बहुत-सी चुनौतियाँ थीं। इन स्कूलों के शुरुआती सालों के अनुभव ऐसी प्रेरक व सहयोगी स्कूली संस्कृति का

निर्माण करने पर ध्यान देने के महत्त्व पर ज़ोर देते हैं जो सभी की ख़ुशहाली को प्रोत्साहित करे और जिसके परिणामस्वरूप सभी के प्रदर्शन में निखार आए। यह भी स्पष्ट है कि स्कूलों में शामिल प्रत्येक व्यक्ति को साथ आने की ज़रूरत है ताकि ख़ुशहाली की संस्कृति के निर्माण के लिए साझी दृष्टि भी विकसित हो सके। बच्चों के सीखने, अपने लक्ष्य हासिल करने और फलने-फूलने के लिए ज़रूरी है कि वे एक तैयार मनःस्थिति में हों और उनकी बुनियादी ज़रूरतें पूरी हों। उनमें सुरक्षा की भावना होनी चाहिए, अपने महत्त्व को पहचानना चाहिए और अपने ऊपर भरोसा होना चाहिए। उन्हें अपने इर्द-गिर्द सकारात्मक आदर्शों की ज़रूरत होती है। इससे ही शिक्षकों की ख़ुशहाली व गरिमा को सुनिश्चित करने की ज़रूरत पैदा होती है। इन सबके परिणामस्वरूप एक ऐसी संस्कृति के केन्द्रीय तत्वों का निर्माण होता है जो साझी दृष्टि, मूल्यों और विश्वासों में योगदान कर सकती है।

Endnotes

i Edgar Schein's Model of Organisational Culture

ii Gruenert, (2008) in School Climate and Culture, Strategy Brief, February 2016, Elisabeth Kane, Natalie Hoff, Ana Cathcart, Allie Heifner, Shir Palmon, Reece L. Peterson, University of Nebraska-Lincoln. p 1

iii Çakiroğlu, Ü., Akkan, Y., & Güven, B. (2012) in School climate and Culture - Elisabeth Kane *et al. ibid.* p 1

iv Kent Petersen and Terence Deal (2002)- The Shaping School Culture Fieldbook, The Jossey-Bass Education Series, Wiley Company. p 9

v Why School Is Important. https://www.waterburybridgetosuccess.org/why-is-school-important/



अरुणा ज्योति अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय बेंगलूरु स्थित स्कूल ऑफ़ एजुकेशन में पढ़ाती हैं। उन्हें एक शिक्षक के रूप में दशकों का अनुभव हासिल है। उन्होंने इंडस इंटरनेशनल स्कूल, हैदराबाद में डिपार्टमेंट ऑफ़ काउंसलिंग एंड स्पेशल नीड्स के प्रमुख के रूप में काम किया है और वीएचएस हॉस्पिटल, चेन्नई व स्नेहा (CENTER FOR SLOW LEARNERS) में वालंटियर भी रही हैं। वे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन स्कूलों की उस केन्द्रीय टीम का हिस्सा थीं जिसने देश भर में पहले छह अज़ीम प्रेमजी स्कूलों की स्थापना की थी। उन्होंने स्कूलों में कुछ ख़ास व्यवस्थाओं व प्रक्रियाओं को स्थापित करने में व्यापक रूप से काम किया है, जैसे कि शिक्षकों का पेशेवर विकास, पाठ्यचर्या विकास, सीसीई, ईसीई, विशेष शिक्षा और किशोरावस्था से जुड़े पहलू। उनसे *aruna.v@apu.edu.in* पर सम्पर्क किया जा सकता है।



शोभा लोकनाथन कवूरी अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के बेंगलूरु ज़िला संस्थान में कार्यरत हैं। वे एक शिक्षिका रही हैं और राजस्थान में शैक्षिक व विकास-सम्बन्धी पहलों में शामिल रही हैं। वे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन स्कूलों की उस स्कूल टीम का हिस्सा थीं जिसने पहले छह अज़ीम प्रेमजी स्कूल स्थापित किए। उन्होंने इन स्कूलों में पाठ्यक्रम विकास, शिक्षकों के पेशेवर विकास और भाषा विकास के क्षेत्रों में व्यापक रूप से काम किया है। उनसे *shobha.kavoori@azimprmjifoundation.org* पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अमिता शीरीं **पुनरीक्षण :** भरत त्रिपाठी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय